विक्रम संवाद

पाक्षिक आलेख सेवा/नि:शुल्क वितरण के लिए

सम्पादक
महाराजा विक्रमादित्य शोध पीठ
1, उदयन मार्ग, उज्जैन-456010
फोन : 0734-2521499, 0755-2660407
e-mail : mvspujjain@gmail.com
vikramadityashodhpeeth@gmail.com

इस अंक में

पृष्ठ क्र. 1-3
राजा ययाति के वंशज हैं यादव
डॉ. मुकेश कुमार शाह

पृष्ठ क्र. 4-6
नदी के आंचल में है प्राचीन सिक्कों का इतिहास
डॉ. वन्दना मण्डोर

पृष्ठ क्र. 6-7
विक्रमादित्य के नवरत्न : वररूचि
डॉ. प्रीति पांडे

पृष्ठ क्र. 8
पुस्तक चर्चा
स्वतंत्रता संग्राम और संस्कृत-पत्रकारिता
मनोज कुमार

राजा ययाति के वंशज हैं यादव ?

डॉ. मुकेश कुमार शाह

पौराणिक मान्यताओं से ज्ञात होता है कि चन्द्रवंश में ययाति नामक एक अत्यन्त प्रसिद्ध राजा हुए, जिनके पाँच पुत्र थे। जब वे संन्यास ग्रहण करके वन में तपस्या करने जाने लगे, तो उन्होंने चर्मण्यवती (चम्बल) और शुक्तिमती (केन) के जल से सिंचित प्रदेश को अपने एक पुत्र यदु को दे दिया। यदु की भी सन्तति हुई और परिणामस्वरूप उस वंश की भी दो शाखाएँ हो गईं। प्रधान शाखा यादव कहलायी और दूसरी हैहय। यादवों का राज्य यदु के राज्य के उत्तरी भाग पर हुआ और हैहयों का दक्षिण भाग पर, जिसे वर्तमान में पूर्वी मालवा कहते हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि हैहयों का राज्य अखण्ड रूप से नहीं रहा, क्योंकि सूर्यवंशी मान्धाता, विशेषत: मुचकुंद, जिसने माहिष्मती नगरी की स्थापना की, तथा पुरुकुत्स का भी इस प्रदेश पर राज्य रहा। परन्तु शीघ्र ही हैहयों ने अपना राज्य पुन: ले लिया। कार्तवीर्य अर्जुन उनमें अत्यधिक प्रसिद्ध विजेता हुआ, जिसकी विजय-वाहिनी उत्तर में हिमालय तक गई।

उसका उत्तराधिकारी जयध्वज हुआ, जो अवन्ति में भी राज्य करता था। यहाँ तक हमें अवन्ति और माहिष्मती नगरों का ज्ञान होता है किन्तु पूर्वी मालवा के अन्तर्गत विदिशा का उल्लेख मार्कण्डेय पुराण में मिलता है। इससे ज्ञात होता हैं कि विदिशा का राजा हैहयवंशी था, जिसका युद्ध वैशाली के राजा करन्धक के पुत्र अवीक्षित से हुआ था। इस संदर्भ से ज्ञात होता हैं कि विदिशा भी एक राजधानी थी। कालान्तर में हैहयों से राजा सगर ने विदिशा छीन लिया, तदनन्तर इस प्रदेश में पुन: यादव आए और अनेक छोटे-छोटे राज्य स्थापित हो गये। वाल्मिकी रामायण से ज्ञात होता है कि शत्रुघ्न ने विदिशा के आस-पास के प्रदेशों को यादवों से जीतकर अपने एक पुत्र सुबाहु को यहाँ का शासक बना दिया था।

भारत युद्ध के पश्चात् विंध्यांचल क्षेत्र में वीतहव्यों (वीतिहोत्र) की बीस पीढ़ियों के राज्य की समाप्ति के पश्चात् अवन्ति में एक राज्य क्रांति का उल्लेख मिलता है। अथर्ववेद में वर्णित ब्राह्मणों के विरोध से वीतहव्यों के विनाश होने की सम्भावना की गयी है। अन्तिम वीतहव्य को मारकर उसके अमात्य पुलिक ने अपना राज्य स्थापित किया। इसी का पुत्र चंडप्रद्योत हुआ जिसके नाम से प्रद्योत वंश प्रसिद्ध हुआ।

प्रद्योत एक महत्त्वाकांक्षी एवं पराक्रमशाली राजा था। प्रकृति से क्रोधी होने के कारण ही संभवत: उसका नाम 'चण्ड' आम जनता में तथा साहित्य में प्रचलित हुआ। अवन्ति-राज्य का विस्तार करने हेतु उसने अपने सैन्य-शक्ति का विस्तार किया था, सम्भवत: इसी कारण उसे 'महासेन' नाम दिया गया।

प्रतिज्ञा-यौगन्धरायण से विदित होता है कि नर्मदा नदी के दक्षिण का नागवन उसके राज्य से अति निकट था। पाली साहित्य से यह भी ज्ञात होता है कि कागपुर (काकपुर, जिला विदिशा आदि) के काकों पर उसी का स्वामित्व था। जब मालवा की प्राय: सभी जातियाँ एवं नर्मदा के दक्षिण की कुछ जातियाँ 'महासेन' का आधिपत्य मानती थी, तब केवल 'पौरववंशीय' वत्सराज उदयन उसको कुछ भी नहीं गिनता था एवं उसके राज्य की सीमा पर प्रद्योत का शासन खण्डित हो जाता था। उदयन को अपने बल एवं पराक्रम पर पूरा विश्वास था। नागवन से हाथी पकड़ कर लाना यह उसका शौक था। हाथी राजाओं के विजय का प्रमुख साधन है, यह बात उसको विदित थी। वीणा-वादन से ही हाथियों को वश में लाने की कला उदयन को साध्य थी।

पराक्रम से असाध्य किन्तु कूटनीति से साध्य करने के लिए प्रद्योत ने वत्सराज उदयन को अपने अधीन करने के लिए उसकी मृगयासक्ति का पूरा लाभ उठाना चाहा। इसके लिए प्रद्योत ने एक विशाल कृत्रिम हाथी बनवाया, जिसके पेट में बीसों सैनिक आ सकते थे (उदेन-वत्थु के अनुसार इस हाथी में 60 सैनिक छिपे हुए रह सकते थे)। वस्तुत: इसे हम मालवा की विज्ञान एवं तकनीकी का एक अंश मान सकते हैं। इस प्रकार के विशाल कृत्रिम हाथी के पेट में सैनिकों को छिपाकर रखने की घटना भारत के इतिहास में बिल्कुल अभिनव एवं असाधारण प्रयोग माना जा सकता है। कुछ विद्वानों ने इस कल्पना को पाश्चात्य जगत् में प्रचलित त्रोजा के घोड़े की कहानी से अपनाया हुआ माना है, किन्तु इस घटना को कपोल-कल्पित-किंवदंती मानना उचित नहीं होगा। भास, हर्ष तथा अनेकानेक साहित्यकारों के ग्रन्थों में इस घटना का उल्लेख हमें मिलता है। यह सम्भव है कि मालवा में इस प्रकार की तकनीकी रही हो, क्योंकि कालान्तर में हम परमार नरेश भोज द्वारा निर्मित यंत्रचालित घोड़े की कथा को भी प्राय: ग्रन्थों में तथा अनुश्रुतियों से पढ़ते-सुनते आये हैं।

बहरहाल उक्त हाथी को नागवन में रखवाकर उसके आसपास अन्य सैनिकों को तैनात कर दिया गया। अपने ही गुप्तचरों के द्वारा वत्सराज को इस नीले हाथी की सूचना दिलवाई गई, जिसे पकड़ने के लिए वत्सराज थोड़े-से सैनिकों के साथ आया और उसने अपने सेनापति रूमण्वान की सलाह नहीं मानी। नर्मदा नदी को पार कर वह उस हाथी के शिकार के लिए 'नागवन' में चला गया। उसके सामने उसका वीणा-वादन विफल रहा। उस 'माया-मातंग' को वत्सराज पहचान पाता उसके पहले ही उसके समीप छिपे हुए तथा हाथी के पेट से बाहर निकले हुए सैनिकों ने उसे घेर लिया। दिन भर युद्ध करने के पश्चात् थक जाने पर वत्सराज पकड़ा गया और आहत अवस्था में ही उज्जयिनी लाकर बंदीगृह ने डाल दिया गया।

प्रतिज्ञा-यौगन्धरायण, कथा-सरित्सागर, बृहत्कथा-मंजरी, त्रिशष्टि-शलाकापुरुष -चरित्र, आदि ग्रन्थों में इस कूटनीति के अन्तर्गत चण्डप्रद्योत को 'भरत' या 'भरत-रोह' नामक अमात्यवर की सहायता हुई, ऐसा बताया गया है। रॉक हिल द्वारा संग्रहित तिब्बती बौद्ध अनुश्रुतियों में भी एक स्थान पर 'राजा चण्ड प्रद्योत के भरत नामक अमात्य के लिए बनाए हुए एक कृत्रिम हाथी की कथा' का उल्लेख मिलता है।

वत्सराज उदयन का रोचक चरित ललित विस्तार,

उक्त हाथी को नागवन में रखवाकर उसके आसपास अन्य सैनिकों को तैनात कर दिया गया। अपने ही गुप्तचरों के द्वारा वत्सराज को इस नीले हाथी की सूचना दिलवाई गई, जिसे पकड़ने के लिए वत्सराज थोड़े-से सैनिकों के साथ आया और उसने अपने सेनापति रूमण्वान की सलाह नहीं मानी। नर्मदा नदी को पार कर वह उस हाथी के शिकार के लिए 'नागवन' में चला गया। उसके सामने उसका वीणा-वादन विफल रहा। उस 'माया-मातंग' को वत्सराज पहचान पाता उसके पहले ही उसके समीप छिपे हुए तथा हाथी के पेट से बाहर निकले हुए सैनिकों ने उसे घेर लिया। दिन भर युद्ध करने के पश्चात् थक जाने पर वत्सराज पकड़ा गया और आहत अवस्था में ही उज्जयिनी लाकर बंदीगृह ने डाल दिया गया।

मेघदूत, नेपाली बृहतकथा तथा तित्थोगली पइन्नय आदि ग्रन्थों में भी उपलब्ध है। इन ग्रन्थों के अनुसार वत्सराज को जीतने पर भी, प्रद्योत ने अमात्यों को आदेश दिया था कि उसे राजकुमारोचित सम्मान के साथ पेश किया जाये। लड़ते हुए उदयन पर बहुत प्रहार हुए थे, यह सुनते ही प्रद्योत का मन अनुकम्पा से स्पन्दित हो जाता है और राजा उसका इलाज ठीक से करने की आज्ञा देता है। गर्मी से उसे अधिक ताप न हो, इसके लिए उसे 'मणि-भूमिका' में रखने विषयक आज्ञा भी प्रदान की जाती है। वस्तुत: इस उद्धरण से ज्ञात होता है कि मालवा में छठी-शताब्दी ई. पू. में चिकित्सा-व्यवस्था ज्ञात थी और जिस मणिभूमिका की जानकारी मिलती है, वह भी आयुर्वेदिक चिकित्सा का एक भाग हो सकता है।

चण्ड प्रद्योत अपनी पुत्री वासवदत्ता की गान्धर्व विद्या सीखने की अभिलाषा पूरी करना चाहता था। जब वह वीणा वादन सिखाने वाले योग्य आचार्य की खोज में था, उसी समय वत्सराज की घोषवती- वीणा प्रद्योत के हाथ में पड़ गयी तब उसे यह बात याद आयी कि हाथियों को भी केवल वीणा-वादन से मोहित करने वाले वत्सराज उदयन के समान योग्य शिक्षक और कौन हो सकता हैं, अत: उसने उदयन और वासवदत्ता के बीच एक पर्दा रखकर, दोनों को एक-दूसरे के असली व्यक्तित्व से भ्रांति में रखते हुए वीणा-वादन सिखाने की योजना बनायी। किन्तु कालान्तर में इनके बीच से पर्दा हटता है और दोनों में अनुराग उत्पन्न होता है और उदयन ने अपने अमात्य यौगन्धरायण की सहायता से वत्सदेश जाने की योजना बनायी, जिसमें वे सफल हुए।

उदयन, वासवदत्ता के साथ उज्जयिनी से कौशाम्बी चला गया। वह किस मार्ग से कौशाम्बी गया, इसके कुछ प्रमाण विद्वानों ने बताये हैं। उज्जयिनी से राजगृह का रास्ता प्रद्योत के समय काफी उपयोग में लाया जाता था। इस विषय में पाली ग्रन्थों में भी कई कथा उपलब्ध है।

इन कथाओं की वस्तु स्थिति जो भी किन्तु इस विवरण को प्रस्तुत करने का ध्येय वस्तुत: यह है कि प्रद्योत युग में उज्जयिनी एक प्रतिष्ठित नगर एवं महाजनपद था, जहाँ से विभिन्न दिशाओं को रास्ते जाते थे, तथा यह एक प्रमुख व्यापारिक नगर भी था, जिससे स्पष्ट होता है कि यहाँ पर आवागमन हेतु रास्तों तथा मार्गों का निर्माण किया गया था, जो कि तद्युगीन तकनीकी का परिचायक है। ये मार्ग मुर्रम, (ईंट के टुकड़े) तथा मिट्टी के बनाये जाते थे। पुरातात्विक प्रमाण इसे सिद्ध करते हैं। इसके अतिरिक्त प्रद्योत की सेना में अनेक प्रकार के द्रुतगामी वाहन थे। उदेतवत्थु में इस प्रकार के पाँच वाहनों का उल्लेख मिलता है, यह भी तद्युगीन तकनीकी का परिचायक है।

चण्ड प्रद्योत का उत्तराधिकारी गोपालक था, किन्तु वह उज्जयिनी के गद्दी पर नहीं बैठ पाया और उसका अनुज पालक शासक हुआ। मगध के शासक उदयीभद्र ने पालक को अनेक बार युद्ध में हराया था। पालक अपने पिता से भी अधिक क्रूर स्वभाव का था। उसके विरूद्ध विप्लव हुआ और विशाखयूप को इस साम्राज्य का राजा बनाया गया। इसके पश्चात् अजक या आर्यक अधिकारी हुआ। यह तथ्य शूद्रक के मृच्छकटिकम् ग्रन्थ में भी उपलब्ध है। पुराणों के अनुसार प्रद्योत वंश में अजक के पश्चात् नंदिवर्धन शासक हुआ, जिसने बीस वर्ष तक राज्य किया। मत्स्य पुराण में अजक और नंदिवर्धन को पाटलिपुत्र का भी राजा लिखा है। ज्ञात यह होता है कि अजक अथवा नंदिवर्धन ने पाटलिपुत्र को अपनी राजधानी बना लिया था, जिससे पूर्व तक फैले हुये विशाल साम्राज्य का प्रबन्ध अच्छी तरह हो सके। पटना में जो दो विशालकाय मूर्तियाँ मिली हैं, उनमें से एक में नंदिवर्धन का नाम भी पढ़ा गया है। विद्वानों में इस नंदिवर्धन पर मतभेद है, संभवत: प्रद्योत वंश ने लगभग 138-150 वर्ष तक शासन किया। इस राजवंश का अस्त सम्भवत: नन्दराज महापण के समय हुआ, जो 'सर्व-क्षत्रांत्तक' कहलाता था। यह समय तीसरी-चौथी शताब्दी ई.पू. का था। पुराणों के अनुसार प्रद्योतों की शक्ति का उन्मूलन शिशुनाग ने किया तथा विशाल साम्राज्य की बागडोर सम्हाली।

नदी के आंचल में है प्राचीन सिक्कों का इतिहास

डॉ. वन्दना मण्डोर

प्राचीन काल में भारतीय संस्कृति के लगभग सभी क्षेत्र धार्मिक परम्पराओं से प्रभावित थे। एरण, विदिशा तथा उज्जैन से प्राप्त मुद्राओं पर पाये जाने वाले चिन्ह एवं प्रतीकों के कुछ उद्देश्य, उपयोग व प्रयोजन है। नदियों को वैदिक काल से ही देवत्व प्राप्त हो गया था। रामायण और महाभारत में नदी देवताओं का उल्लेख प्राप्त होता है। नदी देवताओं की स्तुति वैदिक साहित्य में भी मिलती है। मंदिरों के द्वार पर नदियों का अंकन शुभ माना जाता था। इसी विचारधारा के कारण मुद्राओं पर भी नदियाँ अंकित की गई। अनेक सिक्कों पर नदी व पर्वत का अंकन साथ-साथ हुआ है। जल के महत्व ने नदियों के महत्व को स्वत: ही बढ़ाया है फलस्वरूप इसे हम मथुरा, एरण, विदिशा, उज्जैन कौशाम्बी आदि के सिक्कों पर देख सकते हैं।

नदियों को सदैव प्रवाहित रखने, पर्यावरण को स्वच्छ रखने, जल संरक्षण एवं पुनर्भरण के संदेश भी इन प्रतीकों के माध्यम से जनसाधारण तक पहुंचाये गये हैं। प्राचीन समय में जब संचार के साधन आज जितने विकसित नहीं थे तब भी सिक्कों के द्वारा ही सारे संदेश सम्पूर्ण देश में भेजे जाते थे। भारत की मुद्रा प्रणाली उस समय अत्यंत सशक्त थी एवं कश्मीर से कन्याकुमारी तक एवं अफगानिस्थान से आसाम तक संदेश, निर्देश, आदेश आदि राज्यों के द्वारा सिक्कों के माध्यम से किया जाता था। आज भी अधिक अन्न उपजाओं, छोटा परिवार-सूखी परिवार, विश्व बन्धुत्व आदि के संदेश सिक्कों के माध्यम से दिये जा रहे हैं।

इसी पृष्ठभूमि में सिक्कों पर अंकित कतिपय अंकनों को देखने का प्रयास किया जा सकता है। मथुरा के प्राचीनतम स्थानीय सिक्कों पर नारी आकृति के अंकन के नीचे लहरियादार प्राप्त होती है और उसके बीच मछलियों की पांत बनी है। दोनों को एक साथ देखने पर अनुमान होता है कि इन सिक्कों पर अंकित नारी कदाचित नदी देवता होगी। यह अंकन यहां के सभी शासकों के सिक्कों पर प्राप्त होता है। इस कारण इस नदी देवता को यमुना का प्रतीक सहज रूप से कहा जा सकता है। इस सिक्कों पर नारी आकृति के ऊपर उठे दाहिने हाथ में कमल है और बायां हाथ नीचे लटक रहा है। कमलधारिणी होने के कारण विद्वानों ने इसे लक्ष्मी अनुमान किया है। कमलस्थिता नारी आकृति के सम्बन्ध में तो लक्ष्मी होने का अनुमान किया जा सकता है किन्तु कमल लेने मात्र से किसी नारी को लक्ष्मी मानना कठिन है। हाथ में कमल नारी आकृति के संभ्रान्त होने का द्योतक मालूम पड़ता है और साहित्य में इस रूप में इनकी प्रचुर चर्चा प्राप्त होती है। सिक्कों पर लक्ष्मी अतिरिक्त अन्य देवियों को भी कमलहस्ता दिखाया गया है यथा-पंचाल के सिक्कों पर फाल्गुनी, पुष्कलावती के सिक्कों पर वहां की नगर देवता अम्बा। अत: आश्चर्य नहीं मथुरा के शासकों ने यमुना को देवी मानकर अपने सिक्कों पर अंकित किया है।

मथुरा के इन सिक्कों के अतिरिक्त गुप्तकाल से पूर्व नदी देवता की कोई चर्चा प्राप्त नहीं होती। गुप्तकालीन सिक्कों में समुद्रगुप्त के व्याघ्रनिहंता भांति के सिक्कों कें पृष्ठ भाग पर एक नारी आकृति हस्ति मुख मत्स्य पर खड़ी अंकित है। आभूषणों से सुसज्जित इस देवी के बांये हाथ में कमल है और दाहिना हाथ खाली है।

इसी प्रकार का अंकन प्रथम कुमार गुप्त के व्याघ्रनिहंता भांति के सिक्कों पर भी हुआ है। वहां भी देवी मकर पर खड़ी हैं, बांये हाथ में कमल है, दाहिने हाथ में फल का गुच्छा है जिसे वे सम्मुख आसन पर खड़े मयूर को खिला रही है। प्रथम कुमार गुप्त के ही एक खड्ग निहंता के सिक्के पर भी मकर पर खड़ी देवी का अंकन हुआ है। मकर के उठे हुये मुख में नाल सहित कमल है। देवी अपनी दाहिनी हाथ की तर्जनी से किसी अदृश्य वस्तु की ओर संकेत कर रही हैं, बांया हाथ खाली नीचे लटक रहा है, देवी के पीछे छत्र लिये छत्रधारिणी खड़ी हैं।

स्मिथ ने समुद्रगुप्त के सिक्के पर अंकित इस देवी को समुद्र देवता वरूण की पत्नी का अनुमान किया है और कहा है कि इस कल्पना को राजा के नाम 'समुद्र' से बल मिलता है। उन्होंने विकल्प रूप से यह भी कहा है कि वे रति हो सकती है, क्योंकि उनका वाहन भी मीन अथवा मकर कहा जाता है। एलन ने उन्हें नदी देवता होने का अनुमान किया है और उनकी पहचान गंगा से की है।

अल्तेकर ने स्मिथ के मत का खंडन करते हुए एलन के मत का समर्थन किया है और इस तथ्य की ओर संकेत किया है

कि गंगा और यमुना गुप्त मूर्ति कला में प्रमुख रूप से दिखाई पड़ती है, किन्तु देवी के बांये हाथ के कमल ने उन्हें असमंजस में डाल दिया है, उससे उन्हें उसके लक्ष्मी होने का संदेह होने लगा है। फलत: वे देवी के सम्बन्ध में निश्चयपूर्वक कुछ कहने में असमर्थ हैं।

परमेश्वरीलाल गुप्त का कहना है कि समुद्रगुप्त के सिक्के पर अंकित नारी को वारूणी, रति अथवा गंगा कुछ भी कहा जा सकता है। उन्हें ने इस और ध्यान आकृष्ट किया है कि देवी का जो अंकन कुमारगुप्त के ही कार्तिकेय भांति के सिक्कों पर अंकित मयूर चुगाते हुए राजा का स्मरण दिलाता है और खड्गनिहंता पर अंकित देवी के पीछे छत्र धारिणी, गुप्त शासकों के छत्र भांति के सिक्कों पर अंकित छत्रधारी राजा की याद दिलाती है। इन तथ्यों के प्रकाश में उनकी धारणा है कि इन सिक्कों पर देवी का अंकन न होकर रानी का अंकन हुआ है।

समुद्रगुप्त के सिक्के पर अंकित देवी के रति होने की स्मिथ की कल्पना स्वत: निस्सार है मीन रति का प्रतीक है, वाहन नहीं। कुमारगुप्त के सिक्कों पर अंकित नारी आकृतियों के सम्बन्ध में परमेश्वरीलाल गुप्त का कथन दृष्टव्य होते हुए भी कोई महत्व नहीं रखता। उनके साथ वाहन रूप मे मकर ही यह कहने के लिये पर्याप्त है कि वे मात्र रानी नहीं है। उन्हें नदी देवता (देवी) के रूप में ही पहचानना अधिक संगत होगा। समुद्र और कुमार गुप्त के इन सिक्कों पर ये देवियाँ किस नदी देवता का प्रतीक है, यह तनिक गंभीर विवेचन की अपेक्षा रखता है।

यह ज्ञातव्य है कि भारतीय कला और ब्राह्मण देव परिवार में नदी देवता (देवी) की कल्पना गुप्तकाल से पूर्व अज्ञात है किन्तु कुमार स्वामी ने नदी देवता के मूल में यक्षियों को देखने का प्रयास किया है। उन्होंने इस तथ्य की ओर ध्यान आकृष्ट किया है कि अनेक स्थलों पर यक्ष यक्षियों का जल जंतुओं मकर, जलन्तुरंग जमेल आदि के साथ अंकन किया गया है। इस आधार पर उन्होंने यह भी अनुमान प्रस्तुत किया है कि इन यक्ष यक्षियों का घनिष्ठतम संबंध जीवनदायी जल के साथ रहा है। उन्होंने इस ओर भी ध्यान आकृष्ट किया है कि इस प्रकार की यक्षियों का अंकन वास्तु के विभिन्न अंगों पर न केवल एकाकी वरन् युग्म रूप में भी पाया जाता है। इस प्रकार के युग्मों का जलेम आदि जन्तुओं के साथ अंकन कंकाली टीला में बहुत हुआ है। कंकाली टीला से प्राप्त तोरण पर मकरवाहिनी शालभंजिका नारियों का अंकन विशेष दृष्टव्य है।

मकर वाहिनी शालभंजिका तोरण से और उत्तर के चन्द्रगुप्त के उदयगिरि गुहा के द्वार विम्ब के आस-पास अंकित हुई। इस काल तक यक्षी के इस रूप में कोई परिवर्तन लक्षित नहीं होता। केवल इतना ही अंतर है कि इनमें मकर का अंकन प्रमुख रूप से हुआ है। इन्हें सामान्यत: लोगों ने गंगा-यमुना पहचानने की चेष्टा की है, पर कुमार स्वामी मानते हैं कि उनके इस प्रकार पहचाने जाने का कोई औचित्य नहीं है। तिगोया के मंदिर द्वार पर भी शालभंजिका का ही अंकन हुआ है पर अन्तर यह है कि वहां दोनों और के वाहनों में एक मकर है और दूसरा कच्छप और उसके बाद के अंकनों में ही वृक्ष का लोप हुआ और यक्षियों ने स्पष्ट रूप से दो भिन्न देवता(देवी) का रूप धारण किया है और वे नदी देवता गंगा और यमुना के रूप में पहचानी गयी। उन्हें गंगा और यमुना के नाम से अभिहित किया गया है और उन्हें क्रमश: मकर और कच्छप आरूढ़ बतलाया गया है।

कुमार स्वामी के अनुसार जलचर वरूण के प्रतीक थे और इसलिये नदियों को वरूण की पत्नी कहा गया है। इस कथन का समर्थन उदयगिरि के वराह गुफा के दोनों ओर अंकित दृश्यों से होता है जिसमें दो नदियाँ बहकर सागर से मिलती दिखाई गयी हैं। सागर में वरूण स्वंय रत्नपात्र लिये खड़े हैं और नदियों में मकर और कच्छप पर घट लिये दो देवियाँ हैं। मकर वाहिनी देवीगंगा और कच्छप वाहिनी देवीयमुना कही जाती है। यह बैजनाथ (कांगड़ा) के वैद्यनाथ मंदिर में अंकित अभिलेख और भेड़ाघाट के अभिलेखों से प्रकट होता है।

अस्तु, समुद्रगुप्त के सिंहनिहंता भांति देवी को लोगों ने मकरासीन कहा अवश्य है, पर उसका आकार और रूप मकर की अपेक्षा मत्स्य के समान है। कला में मकर का जिन रूपों में अंकन हुआ है, उससे यह सर्वथा भिन्न है। अत: एलन के उनके नदी देवता होने की बात स्वीकार करते हुए भी मकर के अभाव में प्रतिमा को लक्षणों के अनुसार गंगा कहना कठिन है। किन्तु मच्छुद्दान जातक में गंगा को नदी देवता के रूप में मत्स्य वर्ग की संरक्षिका बताया गया है। गोपीनाथ राव के अनुसार भी गंगा का वाहन मत्स्य या मकर होना चाहिए।

हो सकता है कि समुद्रगुप्त के समय तक गंगा के मकरवाहिनी रूप में अपना मूर्त रूप धारण न किया हो अत: कालकर ने उसके अंकन में बौद्ध अनुश्रुति से प्रेरणा प्राप्त की हो।

यह भी संभव है कि मात्र नदी देवता का अंकन हो, किसी नदी देवता विशेष का नहीं और उस अवस्था में स्मिथ के स्वर में उन्हें वरूण पत्नी कहना अधिक संगत होगा। जिस प्रकार प्रथम कुमारगुप्त ने अपने नाम के अनुरूप अपने एक भांति के सिक्कों पर कुमार (कार्तिकेय) का अंकन किया है, इसी प्रकार समुद्रगुप्त ने अपने नाम के अनुरूप पत्नी का अंकन किया हो तो आश्चर्य नहीं। अरस्तु, कुमारगुप्त के दोनों भांति के सिक्कों पर देवी मकर वाहिनी है, उनके गंगा होने की कल्पना की जा सकती है। खड्ग निहंता भांति के सिक्कों पर मकर वाहिनी देवी के पार्श्व में छत्रधारिणी, उनके इस पहचान में किसी प्रकार बाधक नहीं है। पटना संग्रहालय में गुप्तोत्तरकाल की उड़ीसा से प्राप्त एक मकरवाहिनी मूर्ति है जिसमें सिक्कों के समान ही देवी के पीछे छत्र लिये छत्रधारिणी खड़ी है।

कुमारगुप्त के व्याघ्र निंहत भांति के सिक्कों पर मकरवाहिनी देवी का मयूर को चुगाते हुए अंकन, उनके गंगा पहचानने में थोड़ी कठिनाई अवश्य उत्पन्न करता है। अत: उन्हें नदी देवता स्वीकार करते हुए इस तथ्य पर ध्यान देना उचित होगा कि मयूर का संबंध सरस्वती के साथ है और सरस्वती स्वयं एक नदी है। संभवत: नदी देवता के रूप में सरस्वती के रूप में पहचानने के लिये मयूर के साथ उसका संबंध कर दिया हो। नदी देवता के रूप में सरस्वती अनजानी नहीं है। एलोरा में गंगा, यमुना और सरस्तवी का अंकन हुआ है। किन्तु उनमें वाहन स्पष्ट नहीं है।

भेड़ाघाट के चौंसठ योगिनी मंदिरों में मकर के साथ जाह्नवी (गंगा), कच्छप के साथ यमुना और मयूर के साथ उसका अंकन हुआ है। समुद्रगुप्त के समय तक गंगा का मकरवाहिनी स्वरूप रूढ़ नहीं हुआ था। किन्तु प्रथम कुमार गुप्त के समय तक गंगा का यह स्वरूप रूढ़ होकर विकसित हो गया था। संभवत: उनके समय में सरस्वती की भी नदी देवता के रूप में कल्पना की गयी थी।

वैदिक धर्म में पानी का बहुत महत्व रहा है, और वैदिक साहित्य में आपो देवता (जल देवता) का अनेक स्थलों पर उल्लेख हुआ है। सिक्कों पर धार्मिक भावना एवं जल संरक्षण की पृष्ठभूमि में ही नदी प्रतीकों का अंकन हुआ हो तो आश्चर्य नहीं किन्तु किसी नदी विशेष का कह सकना कठिन ही है। यह अनुमान अवश्य किया जा सकता है कि क्षिप्रा, नर्मदा के प्रतीक स्वरूप ही नदी प्रतीकों का अंकन उज्जयिनी महिष्मति के सिक्कों पर किया होगा।

विक्रमादित्य के नवरत्न : वररूचि

डॉ. प्रीति पांडे

सम्राट विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे वररूचि जो कि संभवत: उसका धर्माधिकारी प्रसिद्ध काव्यकार एवं वैय्याकरण था। वररूचि से सम्बन्धित कई कथानक प्रसिद्ध हैं। इन्हें भारत के अग्रणी विद्वान और कवियों में चिरकाल से स्मरण किया जाता है। इनके कई नाम प्रचलन में थे। त्रिकाण्डशेष कोश के अनुसार उनके कई नाम थे जैसे कात्य, कात्यायन, पुनर्वसु, मेधाजित, वररूचि आदि। कथासरित्सागर में इन्हें श्रुतधर एवं कात्यायन कहा गया है। ई.पू. द्वितीय शती के महर्षि पतंजलि ने काव्य, कात्यायन तथा वररूचि का सादर स्मरण किया है। भाषावृत्ति में भी पुर्नवसु को वररूचि बताया गया है। महाभाष्य में वररूचि को कात्य के रूप में सादर उल्लेख किया गया है। पतंजलि ने उनके कार्तिक तथा अभिमतों की निरंतर व्याख्या एवं चर्चा की है। वररूचि के काव्य उस काल में इतने लोकप्रिय थे कि 'वाररूचं काव्यम्' कहने मात्र से उसका बोध हो जाता था।

वररूचि के विषय में राजशेखर विस्तृत सूचना देते हैं उनके अनुसार वररूचि ने पाटलीपुत्र में आयोजित शास्त्रकार की एक परीक्षा में वे उत्तीर्ण हुये थे।

श्रुयते च पाटलिपुत्रे शास्त्रकार परीक्षा।
अनोपवर्षवर्षाहि पाणिनीपिङगलाविह व्याडि।
वररूचि पतंजलि इह परीक्षिता: ख्यातिमुपजग्मु:।।

उनके अनुसार शिवजी के पुष्पदन्त नामक गण ही अवतार हुये। उनके शाप से कौशाम्बी में एक ब्राह्मण कुल में जन्म लिया और मात्र पाँच वर्ष की अवस्था में ही पितृहीन हो गये थे। ये बहुत ही कुशाग्र बुद्धि थे और एक बार में ही कण्ठस्थ करके याद कर लेते थे। एक बार अकस्मात व्याडि एवं इन्द्रदत्त दो विद्वान उनके घर आए और कौतुहलवशात् व्याडि ने प्रतिशाखा का पाठ किया जिसको वररूचि ने वैसे का वैसा ही दुहरा दिया। इस पर व्याडि और इन्द्रदत्त इनको पाटलीपुत्र ले गये। वहाँ वर्ष और उपवर्ष शिक्षा प्राप्त की। वहीं पाणिनी पढ़ रहे थे जिनको पहले वररूचि ने शास्त्रार्थ में परास्त किया। तदन्तर वे स्वयं भी उनसे परास्त हुये। उपकोशा से विवाह होने पर महाराजा नन्द के मंत्री हुये। महाराजा नन्द की मृत्यु के बाद वे वन चले गये और काणमूति की कथा सुनकर शाप से मुक्ति पाई। कुमारलाट के 'सूसालंकार' से इनमें से कई बातों का समर्थन होता है।

उनके जीवन से सम्बन्धित कई कथाएँ हैं इनमें से एक

दण्डी के अवन्ति सुन्दरकथासार के अनुसार है जिसमें यह वर्णित है कि उत्कल में कलापि नामक ब्राह्मण के घर कात्यायनीदेवी की कृपा से एक पुत्री हुई जिसका नाम कात्यायनी था। इसी का पुत्र आगे चलकर कात्यायन कहलाया।

वररूचि से सम्बन्धित एक अन्य कथा मिलती है जिससे वररूचि का न केवल विक्रमादित्य से सम्बन्धित स्थापित होता है वरन् एक अन्य नवरत्न कालिदास से उसकी समसामयिकता भी सिद्ध होती है। यह कथा विक्रमादित्य की पुत्री या बहन विद्योत्तमा एवं कालिदास के विवाह से सम्बन्धित है। एक बार विद्योत्तमा ने अपने गुरु वररूचि का अपमान कर दिया। गुरु ने प्रण किया कि वे उसका विवाह किसी वज्र मूर्ख से ही करवायेंगे। इधर विद्योत्तमा और राजा की प्रतिज्ञा थी कि जो विद्वान विद्वता में विद्योत्तमा को पराजित कर देगा, वहीं उसका पति होगा।

एक बार जंगल में वररूचि ने एक युवक को देखा जो पेड़ की उसी डाल को काट रहा था, जिस पर वह बैठा था। वे उसे अपने साथ राजधानी ले आये। उसे पट्टी पढ़ा कर ऐसी योजना बनाई गई कि वह राजसभा में विद्वान सिद्ध हो जाये और विद्योत्तमा का उससे विवाह हो जाये। ऐसा ही हुआ, विद्योत्तमा का कालिदास से विवाह हो गया। वास्तविकता ज्ञात होने पर विद्योत्तमा ने अपने पति कालिदास को घर से निकाल दिया। कालिदास ने काली की आराधना की और उनके वरदान से विद्वान और कवि होकर लौटे। तब विद्योत्तमा ने उनका स्वागत किया।

इसी प्रकार एक अन्य कथा भी कालिदास एवं वररूचि के सन्दर्भ में मिलती है। एक दिन वररूचि जंगल में घूमते-घूमते थक गये थे। पानी नहीं मिला। एक पशुपालक से उन्होंने पानी मांगा। पानी नहीं था। उसने कहा भैंस का दूध पी लो और भैंस के नीचे बैठकर 'करचण्डी' करने को कहा। वररुचि ने किसी भी कोश में 'करचण्डी' शब्द नहीं पढ़ा था। पूछने पर पशुपालक ने दोनों हथेलियों को जोड़कर 'करचण्डी' नामक मुद्रा बताकर भैंस का दूध पिलाया। एक विशेष शब्द बताने के कारण पशुपालक को वररूचि ने अपना गुरु बना लिया। राजप्रासाद में ले जाकर राजकन्या का पाणिग्रहण कराया। वह पशुपालक कालिकाजी की आराधना करने लगा और कालिका के प्रत्यक्ष दर्शन होने पर उसे विद्या प्राप्ति हुई और उसका नाम कालिदास हुआ।

यह कथा जैन ग्रन्थ 'प्रबन्ध चिन्तामणि' से मिलती है जो कि मेरूत्तुंगाचार्य की रचना है। इसमें यह भी लिखा है कि वररूचि विक्रमादित्य की पुत्री 'प्रियंगुमञ्जरी' को पढ़ाते थे। एक बार कन्या ने गुरु के साथ हास्य किया। क्रोध में आकर वररूचि ने शाप दिया कि तू गुरु का उपहास कर रही है, तुझे पशुपालक पति मिलेगा। कन्या ने कहा कि जो आदमी आपका गुरु होगा, उसी से विवाह करूंगी। इसी आधार पर वररूचि ने उपर्युक्त पशुपालक से कन्या का विवाह कराया।

कुछ लोगों का मानना है कि वररूचि का भागनिय (भानजा) सुबन्धु जिसने वासवदत्ता की रचना की थी उज्जैन में विक्रमादित्य के दरबार में था। इस प्रकार वररूचि का उज्जयिनी से सम्बन्ध अत्यन्त प्रगाढ़ है।

वररूचि विक्रमादित्य की सभा का अलंकार था। वाररूचतिरूक्त पृष्ठ (42) के अनुसार वररूचि विक्रमादित्य का सभासद और धर्माधिकारी था। इसका गौत्र कात्यायन था। वररूचि स्वयं 'पत्रकौमुदी' नामक अपनी रचना में अपना परिचय देते हुये लिखते हैं कि वह प्रतिष्ठित शासक विक्रमादित्य के निर्देश पर इसकी रचना कर रहे हैं। पत्रकौमुदी पत्रलेखन कला पर लिखा गया अनुपम ग्रन्थ है।

विक्रमादित्य भूपस्य कीर्ति सिद्धेर्निदेशत:।

श्रीमान वररूचि/मान तनोति पत्रकौमुदीम्।।

वररूचि से सम्बन्धित दो अभिलेखीय साक्ष्य भी मिलते हैं-

एक का विवरण जिनप्रमसूरि विरचित 'विविध तीर्थकल्प' में मिलता है कि सिद्धसेन दिवाकर की सम्मति से महाराजा विक्रमादित्य की शासन पट्टिका लिखी गई थी जिसको उज्जयिनी नगरी में संवत् 1, चैत्र सुदी 2, गुरूवार को 'भाटदेशीय महाक्षपटलिक परमार्हत श्वेतांबरोपासक ब्राह्मण गौतमसुत कात्यायन ने लिखा था'। जिन प्रभसूरि का सुल्तान मुहम्मद तुगलक के राज्य में बड़ा मान था और उन्होंने स्वयं यह शासन पट्टिका देखी थी।

इसी प्रकार एक पाण्डुलिपि मिली है जिसकी चर्चा एस.एन. मित्रा करते हैं। यह पाण्डुलिपि 'विद्यासुन्दर' से सम्बन्धित है। इसका नाम 'विद्यासुन्दर' उपाख्यान है, जिसमें विचित्र रूप से बंगाली एवं देवनागरी अक्षरों का मिश्रण करके लिखा गया है। इसके लेखक ने वररूचि को महापण्डित बताते हुये लिखा है कि वररूचि ने समस्त संसार के सम्राट विक्रमादित्य के निर्देश पर विद्यासुन्दर प्रसंग काव्य की रचना की।

इति समस्त महीमण्डलाधिप महाराजा विक्रमादित्य

निदेशलस्थ - श्रीमन्महापण्डित- वररूचि- विरचितं

विद्यासुन्दर प्रसङगकाव्यं समाप्तम्।

पं. भगवद्दत्त जी ने अपने 'भारत के इतिहास' में आचार्य वररूचि को विक्रमादित्य का समकालीन होना सिद्ध किया है।

पुस्तक चर्चा/मनोज कुमार

स्वतंत्रता संग्राम और संस्कृत-पत्रकारिता

सुपरिचित लेखक एवं विषय विशेषज्ञ डॉ. हीरालाल शुक्ल की पुस्तक संस्कृतविद्याया: पुनरूज्जीवनम् (स्वतंत्रता-संग्राम और संस्कृत-पत्रकारिता) संस्कृत भाषा की महत्ता एवं उपादेयता को नये रूप में प्रतिष्ठापित करती है। नयी पीढ़ी जो विदेशी भाषा से मोहित है, उसे मार्गदर्शन करने के लिए यह किताब नितांत आवश्यक है। भारतीय जीवनशैली में संस्कृत भाषा का जो महत्व है, उससे हम सब बखूबी परिचित हैं लेकिन संचार के रूप में संस्कृत भाषा की महत्ता को नये सिरे से समझने का अवसर यह पुस्तक हमें देती है।

संस्कृत भाषा की उपयोगिता को बेहद तार्किक ढंग से लेखक ने समझाया है और उसके विकास में कौन लोग बाधक हैं, इसकी भी उन्होंने व्याख्या की है। वे लिखते हैं कि 'साम्राज्यवादी ताकतों ने सुनियोजित ढंग से संस्कृत को पंडिताऊपन, परम्परा और मूर्खों (पोंगो) की भाषा को नुकसान पहुंचाया। उनकी इस चाल में शेष भारतीय भी उलझ कर दृष्टि गढ़ कर यह मंतव्य बना लिया कि संस्कृत के पाठक अधोगामी विचारधारा वाले होते हैं। ज्ञातव्य है कि 18वीं शताब्दी से पूर्व संस्कृत के संचार माध्यमों के रूप में पांडुलिपियां तथा अभिलेख प्रमुख साधन थे। प्रेस के आविष्कार के साथ ही अब साहित्य मुद्रित होने लगा और संस्कृत की मौखिक परम्परा टूटने लगी। मौखिक परम्परा में विविधता थी किन्तु मुद्रित परम्परा ने संस्कृत की विविधता को समेट कर एकरूपता प्रदान की।' लेखक पाठकों से यह सवाल भी करते हैं कि वर्तमान समय में संस्कृत के संचार माध्यमों की क्या आवश्यकता है ?

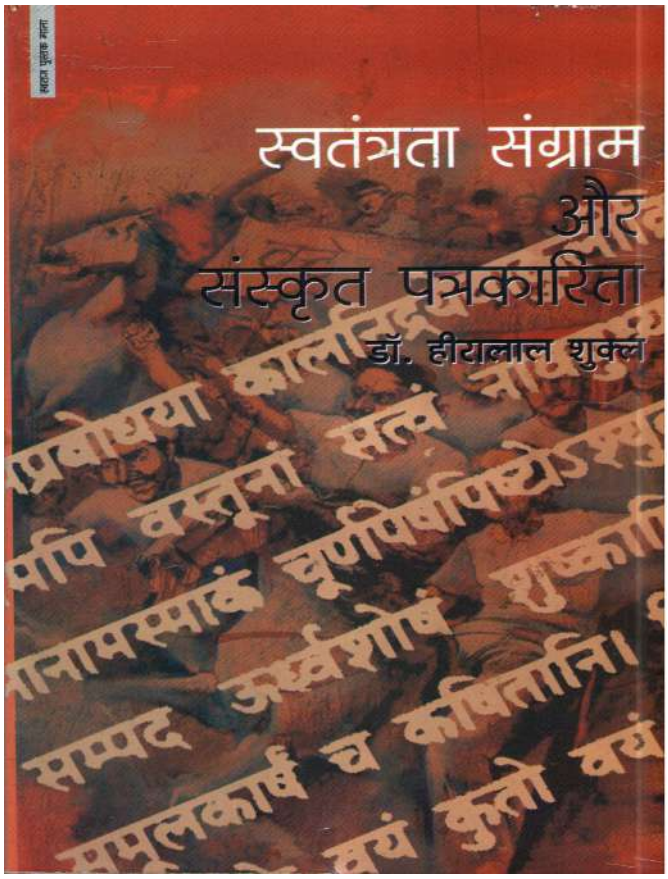

पुस्तक : संस्कृतविद्याया: पुनरूज्जीवनम्
(स्वतंत्रता-संग्राम और संस्कृत-पत्रकारिता)

लेखक : डॉ. हीरालाल शुक्ल

प्रकाशक : स्वराज संस्थान संचालनालय, संस्कृति विभाग, मध्यप्रदेश शासन

मूल्य : 100/-

'संस्कृत में विशिष्ट संचार की विद्यमानता से यह भी सिद्ध होता है कि संस्कृत-भाषी समाज आज भी जीवित है. संचार समाज से जुदा नहीं हुआ करता. समाज के साथ ही चलता है. क्या कारण है कि संस्कृत समुदाय आज भी जीवित है ? संस्कृतज्ञों के अल्पसंख्यक होने का कारण है कि वे अपनी परम्पराओं को आज भी जीवित रखना चाहते हैं. चूंकि उन्हें कोई शासकीय संरक्षण नहीं मिला, अतएव आज भी परम्परा से चिपके हुए हैं.'

इसी पुस्तक से

महाराजा विक्रमादित्य शोध पीठ संस्थान स्वराज संस्थान संचालनालय, संस्कृति विभाग मध्यप्रदेश शासन के लिए 1, उदयन मार्ग, उज्जैन-456010 से प्रत्येक गुरुवार प्रसारित. सम्पादक श्रीराम तिवारी. समन्वयक मनोज कुमार.

आलेख सेवा निःशुल्क वितरण के लिए. फोन : 0734-2521499 0755-2660407 e-mail : mvspujjain@gmail.com,vikramadityashodhpeeth@gmail.com